* श्री वीतरागाय नमः *

श्री हीर विजय जी सूरि

स्तुति

(काव्य त्रय)

प्रकाशक—

मन्त्री—श्री आत्मानन्द जैन ट्रैक्ट सोसायटी

अम्बाला शहर।

भाद्रपद शुक्ला एकादशी,
सन् १९२७ ई०

वीर संवत् २४५३
आत्म संवत् ३२

मूल्य)॥

* श्री वीतरागाय नमः *

श्री हीर विजय जी सूरि स्तुति

१

आओ आओ आज ज़रा उस भव्य मूर्त्ति का ध्यान धरें,
जिसने क्लेश अशेष सहे भारत-हित, उसका स्मरण करें।
था जो राग रहित सन्यासी—पर था राष्ट्रीय राग उसे,
इसी लिये विचरा करते थे वे मुनिवर निज कमर कसे ॥१॥

न थी सवारी साथ, न था कोई निज नौकर चाकर ही,
किन्तु पर्यटन करते थे वे शिष्यवर्ग को लेकर ही।
सुख की उनको चाह न थी, पर सुखी जगतको चाहते थे,
मातृभूमि हित आत्मत्याग का निज प्रण सदा निबाहते थे।२।

बनकर सत्याग्रही वीर वे लेकर खड्ग अहिंसा की,
काटा करते निशदिन विस्तृत बड़ी जड़ें वे हिंसा की।
फहराई थी जिनकी जग में "विजय-जयन्ती" किसी समय,
धन्य धन्य वे मुनिवर, जगगुरु, सूरीश्वर श्री हीरविजय ॥३॥

उनकी देख धर्मतत्परता, सत्याग्रहिता, आत्मत्याग,
अब्बुलफ़ज़ल तथा अकबर का हुआ उन्हीं पर था अनुराग।
भक्ति भाव से नम्र नृपति ने पांच यमों का नियम लिया,
यथासमय हाज़िर हो करके उपदेशामृत पान किया ॥४॥

पड़ा प्रभाव नृपति अकबर पर किया अहिंसा धर्म प्रचार,
धीरे धीरे प्रजा-जनों में भी करता रहता संचार।
पर्यूषण की तिथियों में "ऐलान" किया "हो पशुवध बन्द",
प्रजावर्ग ने भी यह आज्ञा पालन की, हो अति सानन्द ॥५॥

फैली हुई पाशविकता का इस प्रकार अवसान किया,
मिलना सब चीज़ों का सस्ता सबको अति आसान किया।
खुशी हुई तब सब जीवों को पापपुञ्ज का दमन हुआ,
मानो कलियुग का विनाश कर सतयुग का आगमन हुआ ॥६॥

अहो ! आज दिन वह तेजस्वी, वह वर्चस्वी नहीं हुआ,
"हैवानी ताक़त" का नाशक-वीर यशस्वी नहीं हुआ।
वर्ना कहो भला क्या रहने पाती यह पापा जग में,
जो कि समाई हुई आज है इस कलियुग की रग रग में ॥७॥

जय जय मुनिवर ! जय सूरीश्वर ! भारत मा के पुत्र ललाम !
गुण गण राशी, सत् सन्यासी, जगतीतल पर जयतिराम।
है नहीं सत्ता, लिखूं महत्ता सारी ही, मैं- हे गुरुवर,
जो कुछ आया, यह लिख पाया, भक्ति भाव से नत होकर ॥८॥

[पं० ब्रह्मदत्त शर्म्मा]

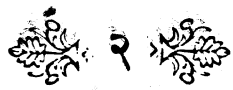

[१]

विश्व-विजय करने वाले श्री हीरविजय गुण-गण के धाम,
विश्व-विदित कर दिया आपने जन्म-स्थल पालनपुर ग्राम।
पाटन नगर गए शिशुता में मातृ पिता से रहित हुए,
विजयदान सूरीश्वर से दीक्षा पा कर सुख सहित हुए॥

[२]

कुछ ही दिनों के बाद देवगिरि चले गये देवोपम आप,
वहां धर्मसागर जी से पढ़ हुए न्याय पारंगम आप।
विद्या के वैभव को पाकर तुरत विश्व-विख्यात हुए,
गूढ़ तत्त्व भी सभी आपको बात बात में ज्ञात हुए॥

[३]

गुण-यश-गान आपका सुनकर नृप अकबर ने बुलवाया,
रत्नादिक उपहार आपके आगे उसने रखवाया।
किन्तु आपने लिया न कुछ भी, साधु-धर्म का रक्खा मान,
मुनिवर! होकर मुग्ध आप से उसने लिया ज्ञान का दान॥

[४]

मुने! आपकी आज्ञा मानी अकबर ने निज गुरुवत् मान,
तुरत निकाला उसने अपने राज्यमात्र में यह फ़र्मान।
"नवरोजे में या रवि के दिन वर्ष गांठ मम जब आवे,
कोई हिंसा करे नहीं, यदि करे कठिन निग्रह पावे"॥

[५]

अपना गुरु श्री हीरविजय को अकबर ने जब मान लिया,
तुरत जगद्गुरु की पदवी दे कर उनका सम्मान किया।

प्रसन्नार्थ गुरुवर के उसने जज़िया कर भी छोड़ दिया,
जैन-धर्म को उत्तम माना, हिंसा से मुख मोड़ लिया ॥

[६]

विद्या जैसी मिली आपको वैसी ही थी कान्ति मिली,
क्रान्ति किसी पर न की आपने, सभी आपको शान्ति मिली।
प्रज्ञा के ज्यों रहे प्रभाकर, त्यों गुणसागर आप रहे,
वशी रहे श्री हीरविजय ! ज्यों, त्यों नयनागर आप रहे ॥

[७]

मृगपति के सम्मुख ज्यों मृगगण, खगसमूह ज्यों खगपति के
विमुख आपके सम्मुख थे त्यों, जैसे उडुगण उडुपति के।
वादिवृन्द-हृत्तम को दिनकर मुनिवर ! दयानिधान रहे,
निर्मम निरहंकार रहे पर सदा सहित सम्मान रहे ॥

[८]

हुए म्लेच्छ भी स्वच्छ आपके सुन करके उत्तम उपदेश,
देश-सुधारक क्लेश-विदारक रहा आपका सदा निदेश।
दर्शन मिला आपका जिनको उन्हे सुजनता प्राप्त हुई,
निर्दय वधिकों के भी उर में दया-सुधा संव्याप्त हुई ॥

[पण्डित रामचरित जी उपाध्याय]

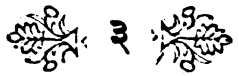

[१]

अमर नगर सा ही वह पावन पालन नगर गया देखा,
मुक्तिधाम सा विश्व-धाम में उसका किया गया लेखा।
मुनिप्रवर श्री हीरविजय जी प्रकटे आप जहां गुणधाम,
सभी काम निष्काम आप के रहे आप यश-मूर्त्ति ललाम॥

[२]

पर का दुःख मिटाया उसने, जिसने दुःख को स्वयं सहा,
शास्त्र-समर में जोता जिसने, वही मही पर अमर रहा।
हीरविजय जी! बाल्य आपका दुःखों का अवतार हुआ,
क्योंकि आपके जननि-जनक से विरहित यह संसार हुआ॥

[३]

मुने! आपका जननी-जनकों से नाता क्या टूट गया,
मानो पूर्व पुण्य के बल से भव का बन्धन छूट गया।
शोक छोड़ कर लोक-हितैषी पाटन नगर गये बे रोक,
विजय दान से वहां आपके उर में बढ़ा ज्ञान-आलोक॥

[४]

मुने! आपको विजयदान से दुर्लभ दीक्षा-दान मिला,
मन में मान-रहित थे तो भी जग में अति सम्मान मिला।
वाचक आदि पदवियों से फिर भूषित हो विख्यात हुए.
क्योंकि धर्म के तत्त्व आपके मुख से जग को ज्ञात हुए॥

[५]

सूरि! आपकी विद्वत्ता की महिमा फैल गई जग में,
सुन कर अकबर की भी श्रद्धा बढ़ी आप श्री के पग में।

अपने कर्मचारियों को तब भेज आपको बुलवाया,
दर्शन पाकर झुका पगों पर निज जीवन का फल पाया ॥

[६]

हय, हाथी, रथ, रत्न आपको अकबर देने लगा वहां,
लोभ दिखाकर विविध भाँति के सका नहीं पर लगा वहां।
कहा आपने तब सुन अकबर ! होते साधु सदा निष्काम,
उन्हें चाहिये नहीं स्वप्न में रमणी, राज्य और धन धाम ॥

[७]

हो प्रसन्न अकबर यों बोला " तो कुछ मुझे दीजिये आप—
पाप-ग्रसित हूँ मुने ! मेटिये मेरे उर अन्तर के ताप"।
तुरत आपने शान्त भाव से धर्म-तत्त्व को समझाया,
जिसे श्रवण करके अकबर ने मन में अतिशय सुख पाया ॥

[८]

अकबर ने उपदेश श्रवण कर मन में निश्चित किया यही,
जग में ताप-मूल हिंसा से बढ़कर दूजा पाप नहीं।
विनय सहित फिर कहा शाह ने क्या आज्ञा है नाथ ! मुझे ?
कुछ भी तो करना ही होगा, गुरो ! आपके साथ मुझे ॥

[९]

यदि कुछ सेवा नहीं करूंगा तो मेरा होगा अपमान,
इस कारण कुछ मुझे आप आदेश दीजिये दयानिधान !
मिला ज्ञान का मेवा मुझको सेवा क्यों न करूंगा मैं ?
गुरु को भेंट करूंगा सब कुछ मन में नहीं डरूंगा मैं ॥

[१०]

कहा आपने सुन नृप ! मुझको किसी वस्तु की चाह नहीं,
पर निरीह जीवों की मुझको सुनते बनती आह नहीं।

मेरे कहने से इस कारण सभी क़ैदियों को दे छोड़।
जितने पक्षी पले हुए हैं दे उनके पिंजड़ों को तोड़॥

[११]

पर्य्यूषण में आठ दिनों तक, अकबर! हिंसा कहीं न हो,
निरपराध जीवों के शोणित से यह कलुषित मही न हो।
भवदाज्ञा को तब अकबर ने अति विनम्र हो मान लिया,
मान आपका रख उसने जीवों को जीवन-दान किया॥

[१२]

धन्य धन्य श्री हीर विजय मुनि! धन्य आपका था उपदेश,
सुन कर जिसे यवन ने छोड़ा सब जीवों को देना क्लेश।
कीर्त्ति आपकी बनी रहेगी, तब तक मिटती तनिक नहीं॥
जब तक चन्द्र सूर्य्य हैं नभ में जबतक स्थित है अचल मही॥

[१३]

वादि-वृन्द को सिंह आप थे, विद्या के थे पारावार,
विमल-विचार आप थे—जग में, किया आपने धर्म प्रचार।
दया-द्रविण के धनद आप थे, उपकृत के थे आप पयोद,
पर-दुःख देख दुःख पाते थे, पर-मुद से पाते थे मोद॥

[१४]

वधिकों को भी सौम्य बनाना खेल आपके लिये रहा,
सपने में भी मुने! आपने कभी नहीं दुर्वाक्य कहा।
काम क्रोध या द्रोह मोह भी लगे आपके साथ नहीं,
रहे स्वतन्त्र सभी तन्त्रों में, रहे किसी के हाथ नहीं॥

[पंडित रामचरित जी उपाध्याय]

श्री आत्मानन्द जैन शिक्षावली

छोटे बच्चों को जैन-धर्म का पूरा २ परिचय कराने के लिये यह शिक्षावली बड़े परिश्रम और व्यय से तैयार की गई है । भाषा सरल और सुगम है, लिखाई, छपाई स्वच्छ और सुन्दर; विषय रोचक और पुस्तक सचित्र है । मूल्य इस प्रकार है:—

पहला भाग	... ...	।)
दूसरा भाग	... ...	।=)
तीसरा भाग चौथा भाग	} प्रेस में ।	

मन्त्री, श्री आत्मानन्द जैन सभा,
अम्बाला शहर ।

श्री आत्मानन्द जैन ट्रैक्ट सोसायटी

अम्बाला शहर

की

नियमावली ।

१–इसका मेम्बर हर एक हो सकता है ।

२–फ़ीस मेम्बरी कम से कम २) वार्षिक है, अधिक देने का हर एक को अधिकार है । फ़ीस अगाऊ लीजाती है । जो महाशय एक साथ सोसायटी को ५०) देंगे, वह इसके लाइफ़ मेम्बर समझे जावेंगे । वार्षिक चन्दा उनसे कुछ नहीं लिया जावेगा ।

३–इस सोसायटी का वर्ष १ जनवरी से आरम्भ होता है । जो महाशय मेम्बर होंगे वे चाहे किसी महीने में मेम्बर बनें, चन्दा उन से ता० १ जनवरी से ३१ दिसम्बर तक का लिया जावेगा ।

४–जो महाशय अपने ख़र्च से कोई ट्रैक्ट इस सोसायटी द्वारा प्रकाशित कराकर बिना मूल्य वितरण कराना चाहें उनका नाम ट्रैक्ट पर छपवाया जावेगा ।

५–जो ट्रैक्ट यह सोसायटी छपवाया करेगी वे हर एक मेंबर के पास बिना मूल्य भेजे जाया करेंगे ।

सेक्रेटरी

मदनमोहन के प्रबन्ध से
निष्काम प्रिंटिंग ऐण्ड ब्लाक मेकिङ्ग वर्क्स सदर मेरठ में मुद्रित ।